बिगड़ती हुई आबोहवा

(2000 से 2018 के बीच लिखी गयी कविताएं)

डॉ. रणजीत

ताकि सनद रहे

क्योंकि सन 2000 से 2006 तक के बीच लिखी गयी मेरी कविताएं 'नई सदी की शुरुआत में' , 'किताबें' , 'बचाओ' , 'क्राकोच' , 'अजन्में बालिका भ्रूण का आत्मचिन्तन' , 'भाषिक भ्रष्टाचार' , 'सिकुड़ता हुआ अन्तरिक्ष' , 'विवेक संगत' , 'मैं ढूँढ़ रहा हूँ' , 'अपने ही घर में' , 'सोचना' , 'नयी पीढ़ी से' , 'सिंहासन या दरी' , 'परमपिता परमात्मा के सिवा' , 'कुहरे में डूबा नया साल है' और 'कितना अच्छा है' आदि, मेरे 2010 में प्रकाशित संकलन 'प्रतिनिधि कविताएं' में सम्मिलित की जा चुकी हैं। इसलिए इस कालावधि में लिखी जाने के बावजूद उन्हें इस संकलन में नहीं लिया जा रहा है। अपवाद स्वरूप 'मैं मरूँगा सुखी' कविता का नया संस्करण, पर्याप्त परिवर्तनों के कारण, 'शान्ति से मरूँगा मैं' शीर्षक से संकलित किया जा रहा है।

अनुक्रम

1.	उल्टे रस्ते	7
2.	स्वागत में	8
3.	दो षटपदियां	9
4.	चलते चलो	10
5.	काला कुंआ	11
6.	मिल्कियत	12
7.	सुख-दुख	13
8.	किन्नरों की जीत	14
9.	अच्छी बातों की चर्चा	18

10. इन्सानियत का पैग़ाम 25
11. विलुप्ति के कगार पर 26
12. हमारी पसंद का मुसलमान 27
13. कहना भी बदलना है 29
14. सद्गृहणी की समाधि 30
15. सभी विकल्प खुले हैं 32
16. परेशान मत करो बच्चों 33
17. दर्द का सम्मान 34
18. धो कर 36
19. मेरे बस की बात नहीं 38
20. लोग 39
21. प्यार करती हुई स्त्री 40
22. असली क्रांति 41
23. एक वीभत्स वास्तविकता 42
24. कठौती में गंगा 44
25. तेरा मेरा साथ 47
26. लोग हैं बेशर्म 48
27. तुम्हें चुनकर 49
28. काम तुम्हारी लपट 51
29. परीक्षा और प्यार 52
30. प्राक्जान्त्विक आस्वाद 53
31. बचा रहूँगा मैं 54
32. दर्पण व्यक्तित्व 58
33. एक बेलाग बात 59
34. शांति से मरूँगा मैं 63

35. एक दुविधाग्रस्त महिला 67

36. सार्थक 70

37. मौत 71

38. सो रही है 72

39. अशोक वाजपेयी की एक कविता सुनकर 73

40. प्यार 75

41. कभी कभी 76

42. चूमा कर 79

43. हो सारा संसार बराबर 80

44. अगर आपको 82

45. संसद में कैसे घुस आये 83

46 लेट जा, भई लेट जा 84

47. चार्वाक का यही है कहना 86

48 हिन्दी समय सागर में 87

49. बयान 90

50. लगता है 91

51. काफ़ी है 95

52. सुन्दरता 96

53. अच्छी लगती है 97

54. लष्टम पष्टम 98

55. चिन्ता मत कर 99

उल्टे रस्ते

उल्टे रस्ते चल पड़ा अपना हिन्दुस्तान
पाँच दशक में बन गया आधा इंगलिस्तान
गर्दन तक रिण में डूबा यह देश पुराना
बड़ा कठिन है अब बिकने से इसे बचाना
उपनिवेश था एक कम्पनी का यह पहले
अब दुक्की पर लगा रहे सब अपने दहले
अन्धे नेताओं ने बिठाया इसका भट्ठा
गले विश्व व्यापार संघ का बांधा पट्टा
विषम खेल है नियम उन्हीं के, वे निर्णायक
वे ही प्रतियोगी हैं, वे ही भाग्य विधायक
शुरू हुआ अब खुल्ला खेल फर्रूखाबादी
देखें कब तक बचती है अपनी आज़ादी

(सीतापुर, अप्रैल-2000)

स्वागत में

आ रहे हैं महामहिम बहुराष्ट्रीय निगम

स्वागत में

अपनी सड़कों की टांगें चौड़ा रहे हैं हम।

(13.12.2000)

दो षट्पदियाँ

टेक टेक कर घुटने एक एक के आगे

फैला फैला हाथ निवेश विदेशी माँगे
आवभगत में देशभक्ति सब गिरवी रख कर
हर उपक्रम में वि-निवेश के गोले दागे
स्वागत में सब झाड़ दी स्वाभिमान की गर्द
अटल देश को दे दिया घुटनों का यह दर्द।

एक एक कर खोले घर के सब दरवाजे
कोई आये लश्कर लेकर और बिराजे
करे मुक्त व्यापार देश को खुलकर लूटे
जब तक चाहे राज करे, जब चाहे रूठे
बस तुमको देता जाए वेतन और भत्ते
कोठी, कामिनियाँ और कपड़ लत्ते।

चलते चलो

जो सोता है
उसका दिमाग सोता है
जो जागता है, उसका दिमाग़ जागता है
ऊँगते हुए शरीर का मन भी ऊँघता है

और चलेत हुए शरीर का मन भी
जिसका तन यात्रा करता है बस या रेल में
और पहुँचता है किसी मंजिल तक
उसका मन यात्रा करता है
चिन्तन और मनन में
और पहुँचता है किसी निष्कर्ष तक
तन और मन का वही संबंध है
जो पहियों और गाड़ी का है
इसलिए मन–मस्तिष्क को गतिशील रक्खो
चलते चलो, चलते चलो।

काला कुआँ

बहुत कुछ है पर दिखता नहीं है कुछ भी
वास्तव में कुछ भी नहीं है
पर निगल जाता है सब कुछ को
डुबो देता है
एक अस्तित्वहीनता के अन्धे कुएं में
नहीं, न पानी, न पृथ्वी, न हवा
कुछ भी तो नहीं है
पर सारे पदार्थों को बना देता है अपदार्थ
द्रव्यों को द्रवीभूत/वाष्पीभूत/परा–भूत
ग्रहों को, उपग्रहों को, पूरे के पूरे सौर–मंडलों को

निगल जाता है एक ही झपाटे में
एक काले निराकार डाइनासौर की तरह
अपनी लपलपाती हुई
गुरुत्वाकर्ष की जीभ से खींच कर ।
एक दिन--
चाहे जितने असंख्य दिन दूर हो वह एक दिन
हमारी यह प्यारी पृथ्वी भी समा जाने वाली है
अनस्तित्व के उसी घुप्प अँधेरे में-
महाकाल के उसी विकराल गह्वर में।

(कानपुर, अप्रैल-2000)

मिल्कियत

तुम चाहे जितने कानून बनवा लो नये नये
मिल्कियत तो हमारे ही पास रहेगी
तुम प्रधान की सीट आरक्षित कर दो
औरतों के नाम
हम अपनी ठकुरानी या बहु को लड़वा देंगे
सीट पिछ्ड़ी जाति की हुई तो
हम अपने दूधिये को खड़ा कर देंगे
तुम सीट अनुसूचित जाति की घोषित करो
हम अपने धोबी या नाई को लड़वा देंगे
तुम डाल-डाल हम पात-पात
हाँ असली संकट तब खड़ा होगा
जब हमारी बहू, हमारा ही दूधिया
हमारा ही धोबी या हमारा ही नाई
हमसे ही म्याऊं करने लगेगा
वैसी स्थिति में हम सब कुछ छोड़ देंगे

भगवान के भरोसे
और सन्यासी हो जाएंगे
मालिक नहीं रहेंगे तो क्या हुआ
'स्वामी' बन जाएंगे
और तुमसे भी
अपने पाँव पुजवाएंगे

(अगस्त–2000)

सुख–दुख

सुख पाया जीवन में काफ़ी
दुख उससे काफ़ी कम पाया
लगता है मेरे दुख का कुछ कोटा अभी शेष है
सुख में कभी नहीं उछला जब
शान्त भाव से मुस्का कर ही उसको भोगा
भुगतूँ मैं अब दु:ख भी उसी शान्त भाव से
यही मनस है, यही इरादा
धन्यवाद दूँ धरती को जीवन को औ' समाज को
जिसने अब तक के मेरे जीवन में
सुख सरसाया, दुख से
कितना कितना ज्यादा।

(वाराणसी–दिल्ली रेलयात्रा, 15.10.2000)

किन्नरों की जीत पर

उत्तर प्रदेश के नगरनिकाय चुनावों में
कुल तीन ही किन्नर उम्मीदवार खड़े हुए
और तीनों भारी बहुमत से जीते
कमालगंज की नगर पंचायत की अध्यक्ष हुईं बिजली
वाराणसी के एक वार्ड से खड़ा किया स्वयं सपा ने
कल्लू हिंजड़े को
पर सबसे शानदार जीत रही गोरखपुर नगर के
महापौर पद पर आशादेवी उर्फ़ अमरनाथ की
निर्दलीय खड़े हुए इस हिंजड़े को हराने के लिए
सभी राजनैतिक दलों ने एड़ी–चोटी का जोर लगाया
खुद मुख्यमंत्री राजनाथ सिंह ने
घोषणा की कि वे
गोरखपुर को गोद ले रहे हैं
पर गोरखपुर की जनता ने
किसी स्थापित राजनीतिक दल की गोद में जाने के बजाय
एक हिंजड़े की बंजर गोद पसन्द की
क्या यह जनता की मसखरी थी
आशादेवी के साथ?
या मतदाता यह देखना चाहते थे कि देखें
हिंजड़े क्या करते हैं राजनेता चुने जाने के बाद?
या यह था उस नस्ल के प्रति जनता का
किसी नये कारण से उमड़ा हुआ कोई नया आकर्षण?
जो युगों से उसकी जुगुप्सा की पात्र रही है
जुगुप्सा की और अश्लील हरकतों की।
क्या जनता में उमड़ा है युगों से अपमानित इस जाति के प्रति
एक नया सम्मान?

शायद उसी के तहत उन्हें अखबारों में पुकारा जा रहा है
हिंजड़े या जनखे की जगह
एक नये सम्मानित शब्द किन्नर से।
नहीं, ऐसा कुछ भी नहीं है
किन्नर शब्द कभी सम्मानजनक नहीं रहा
आप्टे के शब्दकोष में देखा मैंने उसका अर्थ
किंनर यानी बुरा या विकृत पुरुष
यह ठीक है कि यह रूढ़ रहा
एक नाचने-गाने वाली ऐसी जाति के लिए
जिसके बारे में सोचा जाता था कि उसका सिर
घोड़े का था और धड़ इन्सान का
नहीं, जनता में या उनके मतदाताओं में भी
नहीं जागा है उनके प्रति कोई नया जनवादी सम्मान
वे अब भी उसी हेय दृष्टि से देखे जा रहे हैं
शायद किन्नरों को भारी मतों से विजयी बनाकर
मतदाता सिर्फ यही कहना चाहता है :
सभी नेताओं को देख लिया
नरसिंहरावों और इंदिरा गाँधियों को
अटलबिहारियों ऐर जयललिताओं को
वे एक से एक निकम्मे और नाकारा निकले
और साथ में अपने भाई-भतीजे पालने वाले भ्रष्टाचारी भी
नरों और नारियों के नाम पर नपुंसकों को चुनने से
क्या यह अच्छा नहीं होगा कि सीधे हम
नपुंसकों को ही चुन कर देखें
शायद वे ही करें इस कलिकाल में हमारा उद्धार
ज्यादा कुछ नहीं कर पाएंगे तो भी
कम से कम अपने कुनबे पालने के लिए
जन-धन की लूट तो नहीं मचाएंगे
क्योंकि उनके नहीं है कोई भाई-भतीजे
बीवी-बच्चे, नाते-रिश्तेदार

सब रिश्तों को तोड़ कर उन्होंने बजायी है ताली
देखें अशालीन ढंग से मांग कर
और अपनी नंगई से मजबूर कर
अपना पेट पालने वाले ये पेटीकोट धशरी सर्वहारा
कितना बदल पाते हैं सत्ता के स्वभाव को
कितना हो पाते हैं स्वार्थमुक्त
परिवार-निरपेक्ष, धर्म-निरपेक्ष, लिंग-निरपेक्ष
शायद उनके राज में
मर्दानगी की मार से मरी जा रही बिचारी औरतों को
कुछ राहत मिले
यौन तृप्ति की वस्तु बना दिये गये बच्चे और बच्चियाँ
कुछ बच सकें बार-बार बिकने की अपनी बेचारगी से
शायद भौंड़े नाच गानों के बल पर भीख मांगकर
अपना पेट पालने वाली इनकी अपनी बिरादरी
कुछ सम्मानजनक स्थिति पा सके इस समाज में
कुछ बढ़ सके
सत्ता में दलितों, दमितों, उपेक्षितों की हिस्सेदारी
शायद यही है वह संभावना
जिसकी तलाश में
विकल्पहीन मतदाताओं ने पकड़ी है किन्नरों की बाँह
शबनम मौसी से शुरू हुआ यह सिलसिला
देखें कब तक पहुँचता है
दिल्ली की दहलीज़ तक
और कितना बदलता है लोगों का भाग्य।

अच्छी बातों की चर्चा

बुरी बातें तो बहुत हैं हमारे देश में
उनकी चर्चा करने लगेंगे तो कभी खत्म नहीं होगी
चलो, अच्छी बातों की चर्चा करें
यह कितनी अच्छी बात है
कि अभी तक कुछ अच्छी बातें बची हुई हैं।

इससे बढ़कर बुरी बात क्या होगी
गौतम और गाँधी के देश के लिए
कि उसने परमाणु बम बनाया
और उसकी अहंकार पूर्ण घोषणा की
अब कोई हमारी तरफ
आँख उठा कर भी नहीं देख पाएगा
हमारे प्रधानमंत्री गुर्राए
पर आँख उठाने की छोड़िए
बिना डरे हमारे बमों से
हमसे एक बटा पाँच सैनिक शक्ति वाले

हमारे पड़ोसी ने
थूथन उठा कर थूक दिये कारगिल और द्रास में
हज़ारों घुसपैंठिये
क्योंकि हथियारों की होड़ में एक नया अध्याय जोड़कर
परमाणु बमों में अपने बराबर आ जाने का
अवसर दे दिया था हमने उसे
और परमाणु बम हरा नहीं सकते किसी को
न दबा सकते हैं
वे सिर्फ विनाश कर सकते हैं
शत्रु का भी और अपना भी
वास्तव में वे युद्ध के हथियार हैं ही नहीं
सिर्फ सर्वनाथ के साथन हैं।
पर इस इतनी बुरी बात के साथ जुड़ी हुई
एक अच्छी बात भी है
कि कुछ लोग तो ऐसे निकल ही आये इस देश में
राष्ट्रोन्माद के उस वातावरण में भी
जिन्होंने इसे बेलाग बुरी बात कहा
और निकल पड़े सड़कों पर
उसका विरोध करने के लिए।
यह बुरी बात है कि रामदेवरा में
इस शान्ति यात्रा को रोकना चाहा
सरकारी संचार माध्यमों से संक्रमित बम समर्थकों ने
पर यह अच्छी बात है
कि उन्होंने व्यापक पत्थरबाजी नहीं की
सिर्फ गुलेल से घायल हुए राणाजी

और आमरण अनशन पर बैठने के बाद संदीप के
यात्रा फिर से चल पड़ी
और यह तो गजब की अच्छी बात है कि
शान्ति यात्रा के अन्तिम दौर में
मक्खनपुर में स्वयं रा.स.स. वालों ने ही
आयोजित किया शांतियात्रियों का सम्मान
कितनी अच्छी बात है कि
कुछ बम समर्थकों को हो ही गया आखिर
इस समर्थन की मतांधता का भान।
बहुत बुरी बात है कि पूरे देश में
फैलता चला जा रहा है भ्रष्टाचार
मंत्रियों, प्रधानमंत्रियों को छोड़ दीजिए
वे बड़े लोग हैं
और बड़े लोगों को ही पड़ता है उनसे काम
पर छोटे लोगों से संबंधित
सारे सरकारी कार्यालय
भ्रष्टाचार की चपेट में आते जा रहे हैं
इस पृष्ठभूमि में यह कितनी सुखद सूचना है
कि डी.डी.आर कार्यालय के राम जियावन वर्मा ने
कुछ भी नहीं लिया मुझसे
और कहा
'आपके वेतन भुगतान का आदेश होगा
क्योंकि वह जायज है
टाइम जरूर लगेगा
पर आदेश ऐसा होगा

कि उसे कोर्ट में चैलेंज न किया जा सके'
और देर में ही सही
पर बनवाया ऐसा आदेश
जिस पर नहीं मिला मैनेजमेंट को
कोई स्थगनादेश
और फिर खूब खूब देर से ही सही
पर आखिर हुआ मेरा वेतन भुगतान।
यह कितनी अच्छी बात है कि
आज की तारीख में भी ऐसे ऐसे
दफ्तर हैं हिन्दुस्तान में
जिनमें ऐसे ऐसे कर्मचारी मौजूद हैं
जो काम करते हैं
पर पैसा नहीं लेते
यानी आपसे नहीं, सिर्फ सरकार से लेते हैं।
और फिर बुरी बातों की बाढ़ में
इसे भी अच्छी बात ही कहना होगा
कि ज्यादातर रिश्वतखोर कर्मचारी
रिश्वत लेकर कर ही देते हैं आपका काम
और ऐसे हरामखोरों की संख्या अब भी नगण्य है
जो पैसा लेकर भी लटकाए रखते हैं
लम्बे समय तक
और अकड़ते अलग हैं अमचूर की तरह।
चलो अच्छी बातों की चर्चा करें
क्योंकि ऐसी चर्चा से
ठण्डी हवा का एक झोंका आता है

लू–लपट के मौसम में
और मन तरोताज़ा हो जाता है
कितनी बुरी बात है कि सत्ताधारी
और सत्ताकांक्षी
दोनों के दोनों दल
अपने दलबल और दलबदल के साथ
मुक्त बाजार के दलदल में फंस कर
बहुराष्ट्रीय निगमों के लिए
खोल रहे हैं देश के दसों द्वार
सजा रहे हैं उनके स्वागत में
तोरण बन्दनवार
पर यह कम अच्छी बात नहीं है
कि संगठित हो रहे हैं दलित
प्रदर्शन कर रही हैं औरतें
लगातार लड़ रही है भँवरीबाई
अपने बलात्कारियों की गिरफ्तारी के लिए
बढ़–बढ़कर बोल रही है बड़े बाँधों के खिलाफ
मेधा पाटकर
चुपचाप अपने बुकर अवार्ड के पन्द्रह लाख
दे दिये हैं अरुंधती रॉय ने मेधा को
नर्मदा बचाओ आन्दोलन के लिए
और सलिल–शैया पर लेटे हुए बाबा आमटे को
मेग्सेसे के बाद दिया गया है गाँधी शान्ति पुरस्कार
समाजवाद के दोनों मॉडलों के ढहने के
ग़म में डूबे किशन पटनायक

उसकी नयी रूपरेखा रचने में रत हैं।
साम्प्रदायिकता के खिलाफ कार्यशालाएं आयोजित
कर रहे हैं असगल अली इंजीनियर
'युद्ध से कोई समस्या हल नहीं हो सकती'
जगह-जगह कहते फिर रहे हैं
पूर्व नौसेनाध्यक्ष एडमिरल रामदास
मजदूर किसानों की शक्ति संगठित कर
छीना है अरुणा रॉय ने
सुरक्षा के लबादे में सत्य को छुपाने वाली सरकार से
सूचना का अधिकार
राजगोपाल...अन्ना हजारे, सुनीलम
कितने कितने लोग लगे हुए हैं
कितने अच्छे अच्छे कामों में
कितनी कितनी अच्छी बात है यह।

(उज्जैन)

इंसानियत का पैगाम

अब तो इक मजहब नया चलाना ही पड़ेगा
खुदा की जगह इन्सान को बिठाना ही पड़ेगा।
इन्साँ के लिए इन्सानियत से बढ़कर नहीं है कुछ भी
हर इन्सान को यह पैगाम सुनाना ही पड़ेगा।
तोड़ते आये हैं ज़माने से इक दूसरे के इबादतखाने
अब इबादत की इस बुरी आदत को मिटाना ही पड़ेगा।
किसी ईश्वर के नाम पर मारते-मरते रहे सदियों से
भयजनित इस भ्रम को मन से हटाना ही पड़ेगा।
भगवान के भय से सिखाते रहे हैं ये नैतिकता हमें
निडर विवेक को अब नीति का आधार बनाना ही पड़ेगा।
इतना गिराया है इन्सान को इन कठधर्मियों ने
अब इन्हें धर्म का सही मतलब तो बताना ही पड़ेगा।
यह ठीक है कि कोई भी इन्सान कभी सम्पूर्ण नहीं
पर इन्सानियत का आदर्श तो सामने लाना ही पड़ेगा।

विलुप्ति के कगार पर

क्यूबाई अज़गरों
साइबेरियाई पेलिकनों
और कुमाऊँनी बाघों की तरह
विलुप्ति के कगार पर आ चुकी है
ईमानदार भारतीयों की भी नस्ल
इसलिए भ्रष्याचारी नेताओं, अफसरों और
व्यापारियों की शादियों पर भी लगाओ पाबन्दी
या करवा दो उन सब की नसबन्दी
और ईमानदार मजदूरों, किसानों, कर्मयोगियों का
अभ्रष्ट औरतों से होने दो वस्ल
ताकि फिर से फल फूल सके
विलुप्ति के कगार तक पहुँची हुई
ईमानदार हिन्दुस्तानियों की यह नस्ल।

(सीतापुर, नवम्बर-2000)

हमारी पसन्द का मुसलमान

ढाई साल से ढूँढ़ रहे थे हम
अपनी पसन्द का एक मुसलमान
अब हमें मिला
सचमुच एक आदर्श मुसलमान
जो शुद्ध शाकाहारी है
गीता के श्लोक कण्ठस्थ हैं उसे
उनके समर्थन में कुरान की आयतें उद्धृत कर सकता है वह
और बाल ब्रह्मचारी है!
ब्रह्मचारी तो खैर
हमारा अपना नेता भी नहीं है
पर यह भी क्या कम है कि वह
उसकी तरह ही एक कुंवारा बुजुर्ग है
पारिवारिक भ्रष्टाचार की विरुद्ध
एक अभेद्य दुर्ग है!
और उन मुसलमानों की भरपाई कर देता है
जिनसे चार-चार बीवियाँ रख कर
बीस-बीस बच्चे पैदा करने के आरोप में
वोट देने का अधिकार छीन लेना चाहते हैं
बालासाहेब ठाकरे।
फिर उसने हमारे लिये बनाई हैं
लम्बी दूरी तक मार करने वाली मिसाइलें
हमारी परमाणु-नीति का सख्त समर्थक है वह
पड़ोसी देश के साथ हमारे युद्धोन्माद को सहलाता है

इसलिए सच्चा देशभक्त है वह

गुजरात के कत्लेआम पर भी

चुप रहना सीख लिया है उसने!

हमें मिल गया है आख़िर

एक भला-सा, भोला-सा मुसलमान

अपने ही ख़यालों में खोया हुआ

एक मस्तमौला-सा मुसलमान

हमें मिल गया आख़िर

एक सूक्ष्म-सा, अमूर्त-सा, एक जड़हीन-सा मुसलमान

एक अड़ियल घोड़े की लकदक ज़ीन सा मुसलमान

जिसकी चकाचौंध में

हमारी लगाम में रहेगा घोड़ा

देखा, कितने राजनैतिक कौशल से हमने

एक विशाल वोट-बैंक को मोड़ा!

हमारे इस दाँव में सारे विपक्षी आ गये

सोनिया तो सोनिया

मुलायमसिंह भी चक्करघिन्नी खा गये। (12.7.2007)

कहना भी बदलना है

परेशान मत हो

पानी पी और सो

क्यों जान जलाता है

जो होता है सो हो

यह कैसे हो सकता?

उठ जा अपना मुँह धो

आँखें खोल के देख

तन्द्रा में मत खो

सब सामने आ जाये

भला बुरा है जो

भले न लड़ उससे

बद को बद कह तो

कहना भी बदलना है

उससे फटती है पौ।

(25.12.2001)

सद्गृहणी की समाधि

इसी में दफ्ना दूंगा इसे   मैं

इसी की सफ़ाई करते करते

इसे झाड़ते, रगड़ते, धोते हुए

पोंछते हुए इसी की ट्यूबलाइटें और पंखे

मरी है यह।

कितने कितने दिन तक समझाता रहा उसे

कि देश में पेयजल की कमी है

आँगन धोने में इसे बरबाद न किया करो

ज्यादा से ज्यादा हफ्ते में दो बार धो लिया करो इसे

पर वह नहीं मानी।
पुताई के बाद
वाउण्ड्री वाल पर मिट्टी का एक धब्बा भी दिखाई देता
तो उसे अखरता रहता था आते-जाते
और जब तक वह उसे हटाने की कोशिश में
समोसम भी नहीं रगड़ लेती
उसे शान्ति नहीं मिलती थी।
अब कैसी शान्त पड़ी है
अपने साफ-सुथरे घर में।
मन तो कहता है
कि इसी घर में उसकी अन्त्येष्टि कर दूँ
इस पर पेट्रोल छिड़क कर
वैसे भी अब क्या बचा है इसमें मेरा ?
पर नहीं
फूंक दूँगा इसे तो कहाँ बैठ कर
बहाऊँगा आँसू उसकी याद में
कहाँ बिसूरूंगा उसके साथ बिताए हुए
चालीस बरसों पर ?
इसलिए शान्त भाव से
इसी आँगन में दफ़्ना दूँगा इसे
जिसे उसने धो-धो कर ठण्डा किया है हर रोज़
इसी घर को बना दूँगा उसकी मज़ार
और उसी पर लगा दूँगा एक समाधिलेख :
यहीं सोयी है
सफ़ाई के लिए शहीद हुई एक सद्गृहणी

जिससे दीवार पर कोई
साधारण से साधारण धब्बा तक सहा नहीं जाता था।
सफाई के इसी जंगल में
खेत रही बिचारी
और चट कर ली गयी
पूर्णतावाद के दिलक़श दरिन्दों के द्वारा।

(सीतापुर, दीपावली-2002)

सभी विकल्प खुले हैं

राजनीति में कौन हैं, जो दूध के धुले हैं
हम तो हर कीमत पर, कुर्सी पाने को तुले हैं
किसके साथ सोयें, किसके साथ जागे, किसी को क्या मतलब
तख़्त में साझेदारी के सारे विकल्प खुले हैं

(सितम्बर-2000)

परेशान मत करो, बच्चों !

मात्र मिट्टी, बालू, पत्थरों का ढूह नहीं है यह
जीवित, जागृत, जंगम है यह पृथ्वी
एक अरब जीव-प्रजातियों का
हलचल-भरा वैश्विक मधुछत्ता
यह साँस लेती है, धड़कती है
सोती है, जागती है
करुणा और क्रोध करती है
दौड़ती है, भागती है
तुम्हारे तेजाबी धुएँ से इसकी साँस घुटती है
तुम्हारे खनन-दैत्यों से इसकी रूह कांपती है
तुम्हारे परमाणु-विस्फोटों से इसके कान फटते हैं

तुम्हारे विशाल बाँधों के बोझ से

इसका दिल दरकता है

यह पृथ्वी है- तुम्हारी माता

इसे इस तरह परेशान मत करो, बच्चों!

दर्द का सम्मान

दर्द का सम्मान मत करो

नहीं तो वह जम कर बैठ जाएगा

तुम्हारे तन मन में

एक ढीठ मेहमान की तरह

उसके घंटी बजाने या आवाज देने पर

दरवाजे तक तो जाना ही पड़ेगा तुम्हें

पर उसे देखते ही बोलो :

“ आगे चलो भाई

हम भीख को बढ़ावा नहीं देते’ ’

मत खोलो दरवाजा

कि वह अपने आगमन को तर्कसंगत बताने

की कोशिश कर सके

उसकी सुनोगे

तो तरस खाओगे

और बहक जाओगे

एक बार उसे भीतर आ जाने दिया तुमने

उसके नाश्ते पानी का इन्तजाम कर दिया

तो वह जाने का नाम नहीं लेगा

दर्द की प्रकृति का द्वन्द्वात्मक रहस्य है यह

कि आप सोचते हैं कि स्वागत-सत्कार से तृप्त होकर

वह चला जाएगा

आपका भी दयाभाव तुष्ट होगा

पर वह जम कर बैठ जाता है उल्टे

जाने का नाम ही नहीं लेता

उपेक्षा कर के ही भगाया जा सकता है उसे।

दर्द का सम्मान मत करो।

नयी पीढ़ी से

न चण्ट-चालाक बनो, न भोले नादान बनो,
न रूढ़िवादी हिन्दू बनो, न बंद दिमाग मुसलमान बनो।
नयी पीढ़ी के ओ किशोरों और नौजवानों,
ब न सकते हो तो थोड़े और बेहतर इन्सान बनो॥

धो कर

धो कर स्वच्छ किये रखता हूँ
मैं अपने प्रत्येक अंग को प्रतिदिन
इस प्रत्याशा में कि न जाने

कब किस झड़प के बाद अचानक
उमड़े उच्छृंखल प्यार तुम्हारा
और न जाने
इनमें से कब
किस-किस की किस्मत खुल जाए-
मिल जाए वरदान तुम्हारी
दृष्टि, स्पर्श, चुम्बन का।

(सीतापुर, 22.11.2004)

मेरे बस की बात

हर साथी का साथ निभाना मेरे बस की बात नहीं है
जैसा वक्त हो वैसा गाना, मेरे बस की बात नहीं है।
दुश्मनों को तिलमिलाना तो मुझे आता है, लेकिन
सब मित्रों को खुश रख पाना, मेरे बस की बात नहीं है।
मरता आया हूँ जीवन भर मरने लायक हर शै पर मैं

लेकिन डर डर कर मर जाना, मेरे बस की बात नहीं है।

लड़ता रहा हूँ चौराहों पर, जीता भी हूँ, हारा भी पर

मन छोटा कर के घर आना, मेरे बस की बात नहीं है।

विश्व व्याप्त खूंखार व्यवस्था, सब मिल कर तोड़ें तो टूटे

बड़ा जटिल है ताना बाना, मेरे बस की बात नहीं है।

लोग

अपने घर के सामने ऊँचे उठा कर

सड़क को नाली बनाने पर तुले हैं लोग।

भोग का, व्यापार का पर्याय तो पहले भी था, अब

प्यार को गाली बनाने पर तुले हैं लोग।

पत्नियाँ देती नहीं हैं सालियों-से सुख, तभी तो

पत्नी को साली बनाने पर तुले हैं लोग।

रहीम को रसखान कर, तुलसी बना कबीर को

मख़्दूम को हाली बनाने पर तुले हैं लोग।

काले बुर्के डाल कर गौरांगनाओं के मुखों पर

जिन्दगी काली बनाने पर तुले हैं लोग।
मुजरिमों को वोट दे दे कर चुनावों में
गुलख़ोर को माली बनाने पर तुले हैं लोग।

प्यार करती हुई स्त्री

कैसी लगती है
अपनी साठवीं बरस गाठ पर
प्यार करती हुई स्त्री ?
झुर्रियाँ गायब हो जाती हैं उसके चेहरे से
आँखों में एक अद्‌भुत चमक आ जाती है
बिल्कुल एक सोलह साल की नवयुवती की तरह
चूमती है ताबड़तोड़ साठ साल की स्त्री
अपने सड़सठ साल के प्रेमी के
होठों, गालों और आँखों को।
प्यार, जाति और धर्म और वर्ग को ही नहीं लांघता
रूप, रंग और कद-काठी की ही उपेक्षा नहीं करता
उम्र को भी अतिक्रान्त कर जाता है अक्सर
एक बीमार और कुरूप व्यक्ति भी जब प्यार करता है
स्वस्थ और सुन्दर हो जाता है।
कैसे एक छह साल की बच्ची की तरह

उसकी गोद में दुबक जाती है
साठ साल की स्त्री
और शरारत भरी आँखों से मुस्कुराती है
बिल्कुल छह साल की खिलंदड़ बच्ची की तरह।

असली क्रान्ति

घोड़े पर सवार एक चमार
चाबुक बरसा रहा है
घोड़े से उतार दिये गये एक ठाकुर साहब पर
सचमुच एक क्रान्ति आ गयी है
पैदल सवार हो गये हैं
और सवार पैदल
उन्होंने अपनी जगहें बदल ली हैं
पर घोड़े और चाबुक?
वे ज्यों के त्यों हैं।
असली क्रान्ति तो वह होगी जिसमें
न घोड़े रहेंगे, न चाबुक
सब पैदल होंगे अपने ही पांवों पर चलते हुए।

एक वीभत्स वास्तविकता

मृगराज !

नर केसरी !!

बब्बर शेर !!!

कितना भव्य बिम्ब है

शक्ति और साहस के शाही अन्दाज़ का।

पर मैंने देखा है कि 'डिस्कवरी'   की फिल्मों में

दरिन्दगी की बुनियाद पर खड़ा

उसका दाम्पत्य जीवन

क्रूर प्रकृति की एक वीभत्स वास्तविकता

मादा शेरनी को सहवास के लिए विवश करने के लिए

यह नरपिशाच

उसके मासूम बच्चों को खा जाता है

चोरी से घुस कर उसकी मांद में

जब वह उनके भोजन की जुगाड़ में निकलती है।

पागलों की तरह भटकती है

वह बिलखती हुई वत्स वंचिता

और फिर से उनकी कामना में

चाटती है उनके हत्यारे का मुंह

और तब वह चढ़ता है शाही अन्दाज से उस पर

यह दृश्य देखते हुए मेरी रूह कांप जाती है

धरती में समा जाना चाहता है मेरे भीतर का वह प्राणीत्व

जो मुझे जैविक रूप से जोड़ता है, उससे।

नर केसरी की शान

और मादा केसरी की आन-बान की कहानियाँ

तड़प-तड़प कर दम तोड़ देती है मेरी आँखों के सामने ही

गर्म रेत में तड़पती हुई मछलियों की तरह।

कठौती में गंगा

मन चंगा तो कठौती में गंगा

कितना सही पर्यवेक्षण है सन्त रैदास का

कल मैंने इसे प्रत्यक्ष अनुभव किया

गंदला हो गया था मेरा मन कल

अपनी ही पत्नी से

तो कुछ क्षण के लिए लगा

अपना पूरा जीवन निरर्थक

पूरा परिवेश बेगाना
पूरी दुनिया नरक
अपने आप को हटाने के लिए उस मन:स्थिति से
उस्मानिया अस्पताल के
स्पेशल वार्ड के बैड पर लेटा हुआ
मन ही मन दुहराने लगा
अपनी एक प्रारंभिक कविता- 'ये सपने : ये प्रेत'
एक बिल्कुल दूसरी दुनिया की
अजनबी सी लगी मुझे अपनी ही कविता
उस अतीत की जो न जाने कहां दफन हो चुका है।
जब तक मन रहा उसके व्यवहार पर
क्रुद्ध और क्षुब्ध
जीने लायक नहीं लगी जिन्दगी
भाग जाने लायक नहीं लगी कोई जगह
- कोई शरण स्थली
किसी मित्र, नातेदार, भाई-बहिन, किसी का घर
सब कुछ लगा अभिशाप-ग्रस्त।
आज मन चंगा हुआ है
तो लौट आयी हैं सारी खुशियां
यही संसार हो उठा है अपना
जिसके न जाने कितने जाने-पहचाने कोने हैं
कितने कोटर हैं प्यारे-प्यारे
रहा जा सकता है जिनमें
पूरी हंसी-खुशी के साथ।
'सचमुच सब कुछ निर्भर करता है मन पर'

मन कहना चाहता है

पर बुद्धि उसमें संशोधन करती है-

‘सब कुछ’ नहीं तो, कम से कम ‘बहुत कुछ तो’

मन अच्छा हो, स्वस्थ हो

तो एक स्वच्छ सरोवर लगता है पूरा संसार

मन गंदला हो तो गंदला जाता है

पूरा का पूरा जीवन-व्यापार

‘खैर कुछ अच्छाई बुराई तो है ही बुनियादी

इस दुनिया में’ कहता है मेरा विवेक

पर बाकी सब रचता है हमारा ही मन

रंगता है अपने रंग में

हमारा ही स्वस्थ या रुग्ण मन

इसलिए मन को बचाओ राग और द्वेष से- सोचता हूँ

नहीं, केवल द्वेष से और

क्रोध से और क्षोभ से और अहंकार से

और रंगों उसे राग से / महाराग से

फिर देखो कि कितना अपना हो उठता है

यह संसार

इसका एक-एक अणु

इसकी एक-एक इकाई।

(देवी होम्स, हैदराबाद

28.10.2006)

तेरा मेरा साथ

3-5 तू कर मत ज्यादा

9-2-11 हो जा

13 मेरा 7 नहीं संभव है सुमुखी

तू नवयुग की वायलिन है, और

मैं आदिम अलगोजा।

लोग हैं बेशर्म

लोग हैं बेशर्म, बोलो क्या करें?

कुटिल इनके कर्म, बोलो क्या करें?

द्वेष इनका देश है और घृणा इनकी जाति है

ढोंग इनका धर्म, बोलो क्या करें?

चीथ कर मासूम हिरणों को अरे ये भेड़िये

ओढ़ते मृगचर्म, बोलो क्या करें?

ज़ुल्म का भांडा लबालब भर चुका

और लोहा गर्म, बोलो क्या करें?

तुम्हें चुन कर

तुम्हें चुन कर मैंने

अपने बच्चों के भावी स्वभाव को चुना

तुम्हारे कारण
छोटे-मोटे अपराध माफ कर देंगे मेरे बच्चे
अपने साथियों से
थोड़ा-सा झूठ बोलने को
बुरा नहीं समझेंगे वे
किसी की कड़वी बात भी
सह लेंगे यह सोच कर
कि शायद यह आदमी
कभी हमारे कुछ काम आये
तुम्हें चुनकर
मैंने अपने बच्चों में दुनियादारी चुनी
अपने जैसे ही स्वभाव की कोई चुनी होती अगर
तो हर एक से उलझते रहते मेरे बच्चे
व्यवस्था के विरुद्ध झगड़ते ही रहते
हरदम मेरी तरह
उसूलों के नाम पर जलते-उबलते रहते
तुम्हें चुन कर मैंने घर की शांति चुनी
उनके लिए अच्छी नौकरियां चुनीं
सुखी गृहस्थ जीवन चुना
तुम्हें चुन कर मैंने
अपने बच्चों का सुखी भविष्य चुना।

काम तुम्हारी लपट

काम तुम्हारी लपट का बड़ा अजीब स्वभाव
ज्यों-ज्यों पानी डालते, त्यों-त्यों खाती ताव

(हैदराबाद, 10.10.2007)

परीक्षा और प्यार

परीक्षा मत लो
कि दूसरा तुम्हें प्यार करता है या नहीं?
प्यार करो
वह भी निश्चय ही तुम्हें
बिना परीक्षा के प्यार करेगा।

प्रतीक्षा मत करो
कि दूसरा तुम्हें प्यार करे
और तब तुम भी उससे कर सको
पहले प्यार करो
फिर देखो कि वह करता है या नहीं
वह भी निश्चय ही तुम्हें
प्यार करेगा, बिना प्रतीक्षा के

परीक्षा और प्रतीक्षा
दुश्मन हैं प्रेम की
प्रेम से इन्हें दबाओ-
प्रेम से इन्हें जीतो।

प्राक्जान्त्विक आस्वाद

जब तुम मेरे शरीर को सहलाती हो
मेरी आँखें बन्द क्यों हो जाती हैं?
क्योंकि त्वचा सबसे प्राचीन इन्द्रिय है
और आँखें सबसे बाद की
विकास के क्रम में
त्वचा ने ही विशेषीकरण के द्वारा
नाक, कान, जीभ और आँखों का रूप धारण किया है।
जब तुम अपनी अंगुलियों से, हथेली से, त्वचा से
मेरी त्वचा का स्पर्श करती हो
मैं अपनी शेष सभी इन्द्रियों को मूंदकर
अपनी त्वचा से तुम्हारी त्वचा का स्वाद लेता हूँ
एक प्रागैतिहासिक, प्राक्मानविक,
प्राक्जान्त्विक आस्वाद
और उसमें डूब जाता हूँ।

बचा रहूँगा मैं

मैं सोचता हूँ
तो मैं हूँ
और मेरे लिये है यह सारा संसार
मैं सोचना बन्द कर दूँ
तो कहाँ हूँ मैं?
कहाँ है यह सारा संसार?
कम से कम मेरे लिये तो नहीं ही रहेगा वह।
मैं लगभग सोचना छोड़ दूँ
तो मैं लगभग नहीं रहूँगा
और पूरी तरह छोड़ दूँ
तो पूरी तरह नहीं रहूँगा मैं।

मैं जिसके बारे में सोचता हूँ
वह है
और कहीं नहीं
तो है मेरी सोच के दायरे में
कल मैंने सत्तावन साल पहले नहीं रहे
अपने दादा जी के बारे में सोचा
और पैंतीस साल पहले गुजर गयीं अपनी मां के बारे में
कि किस तरह वे एक शरणार्थी के रूप में महीनों धक्के खाते-खाते

पाकिस्तान बन गये झेलम जिले के मदूकालस गांव से
हिन्दुस्तान में शामिल मेवाड़ के कस्बे भीलवाड़ा तक पहुँचे थे
और हम बच्चे अपनी मां के साथ बैठकर
बीन रहे थे
उनके महीनों से नहीं धुले कुर्ते की सीवनों से जुएं
तो इसका मतलब है कि वे हैं अभी भी
मेरे भीतर
उन्हें कभी-कभार याद कर लेने वाले
मेरे भाई-बहिनों की चेतना में
मैंने उनके बारे में सोचा
तो पाया उनके होने का प्रमाण।
मैं भी रहूँगा
रहूँगा अपने बच्चों
अपने मित्रों-परिचितों के बच्चों की स्मृतियों में
अपनी किताबों में
- अगर उनमें से कोई बची रही
किसी घर, किसी पुस्तकालय में।
रहूँगा अपने अनगिनत विद्यार्थियों, श्रोताओं, सामाजिकों की स्मृति में
दुकानदारों, सब्जीवालों, बिजली ठीक करने वाले मिस्त्रियों
राजगीरों, बढ़इयों, घरेलू नौकरानियो, रिक्शेवालों
और स्कूटर मैकेनिकों की स्मृतियों में
जिन जिन से मेरा साबका पड़ा है इस जीवन में
वनस्थली विद्यापीठ और बांदा और बीकानेर की
उन छात्र-छात्राओं की स्मृतियों में
जो मेरे स्नेह की विशेष पात्राएं रही

जैसे प्रीयूनिवर्सिटी की उस छहफुटी छात्रा की
जिसने बाद में जम्मू के एक पायलट से विवाह किया
और मुझे एक दिन पहलगाम में मिली
और गोरी-ठिगनी उस बुलन्दशहर की लड़की की चंचल आँखों में
जिसका नाम ही मुझे भूल गया
वह भी भूल जाये शायद मेरा नाम
और याद रखे केवल मेरी कविता की कोई पंक्ति
और पटना की उस बड़ी-बड़ी आँखों वाली मुकुल की स्मृति में तो जरूर ही
जिसके स्नेह और सम्मान भरे पत्र मिलते रहे मुझे
उसकी शादी के वर्षों बाद तक
उसके शायद बच्चे भी मुझे बचाये रखेंगे
क्योंकि उसने जरूर पढ़ाई होगी उन्हें
मेरी कविताओं की पहली किताब
जो मुझसे ही खरीदकर सहेजी थी उसने
उसके बच्चों के बच्चों तक बची रह सकती है
सीलन और दीमकों से मेरी वह किताब।
कभी न कभी किसी अनाम पाठक की आँखों के सामने
अनायास मेरी कोई कविता आ जायेगी किसी पत्रिका में छपी
तो बचा रह जाऊँगा उसकी आँखों
उसके दिमाग के किसी कोने में
या किसी कबाड़ी के हाथों बेच दिये गये
उसके पन्नों से बने लिफाफे में
कोई नाश्तेदार जलेबियां या समोसे घर ले जायेगा
और निगाह डालेगा उन्हें खाते हुए मेरी किसी पंक्ति पर
बचा रहूँगा मैं कहीं न कहीं

किसी न किसी की सोच में।

दर्पण व्यक्तित्व

दर्पण व्यक्तित्व हो तुम

मेरी बुलबुल

रस या विष

जो भी तुम्हें मिलता है

उसे ज्यों का त्यों

परावर्तित कर देती हो तुम

नहीं, केवल ज्यों का त्यों नहीं

थोड़ा और बढ़ा कर

सामान्य दर्पण नहीं

एक उन्नतोदर दर्पण हो तुम

स्नेह या निर्वेद

प्रशंसा या आलोचना

जो भी देता हूँ मैं तुम्हें
तुम उसे थोड़ा और फैला कर
थोड़ा और मीठा या तीखा बनाकर
लौटा देती हो मुझे।

एक बेलाग बात

मैं ईमानदारी से अपनी दाय
अदा करना चाहता हूँ मेरे देश
अपना सही-सही आयकर
और उस पर तीन प्रतिशत शिक्षा कर भी
कि किसी सुदूर गाँव की पाठशाला की छत
बरसात में टपके नहीं
और इतमीनान से अपना पाठ पढ़ सकें
वहाँ गरीबों, दलितों और अल्पसंख्यकों के भी बच्चे
कि मेरे गाँवों और शहरों की सड़कें हों गड्ढा मुक्त
कि उन पर दौड़ती हुई गाड़ियों की
कमर न टूटे अचानक
कि उन पर अपनी साइकिलों से स्कूल-कॉलेज जाती हुई
किशोरियों को धचके न खाने पड़ें
कि किसी बस्ती, किसी गांव, किसी मोहल्ले में
छाया न रहे घुप्प अंधेरा
मेरे अपार्टमेन्ट की भी लिफ्ट रुकी न रहे

बिजली कटौती के कारण
और मुझे अपनी दुखती टांगों से हांफते हुए
चढ़नी न पड़ें चार-चार सीढ़ियाँ
मैं अपने हिस्से का पूरा-पूरा आयकर भरता हूँ हर साल
उसका सही सही हिसाब लगा कर, मेरे देश
तुम्हारी ही दी हुई आय से
कि खुशहाल बनो तुम
यानी मैं और मेरे जैसे तमाम तमाम लोग
वे भी, जो अभी भी बहुत पीछे छूट गये हैं
विकास की इस दौड़ में
कि मेरी तरह ही पीने का स्वच्छ पानी मिल सके
ऊँचे पहाड़ों और सुदूर रेगिस्तानों में
रहने वाले मेरे भाई-बहिनों को
कि तीन-तीन किलोमीटर तक
पानी की गगरी न ढोनी पड़े
उत्तराखंड और जैसलमेर की
काम के बोझे से वैसे ही लदी हुई औरतों को
कि किसी भी गाँव में फसल बरबाद होने पर
खुदकुशी न करनी पड़े
किसी भी किसान को
पर तुम हो कि मेरे देश जो
मेरे, मेरे सहवासियों के दिये हुए कर से
लोगों के भोजन, पानी, घर, बिजली, सड़कों की
व्यवस्था करने की बजाय
नये नये हथियार जुटाने

पड़ोसियों पर धौंस जमाने
मंत्रियों, अधिकारियों के बंगले सजाने
उनके लिए गाड़ियों
और हेलीकाप्टरों के काफिले मुहय्या कराने
होनहार खिलाड़ियों की सुविधाएं जुटाने की बजाय
कामनवेल्थ खेलों की शानशौकत बढ़ाने
चालीस करोड़ का गुब्बारा उड़ाने
तैयारियों के नाम पर अन्धाधुंध कमीशन खाने
और यहाँ तक कि
राज्य सरकारों की सलामती के लिए
मंदिरों-मठों में
विशेष पूजा-अर्चना आयोजित कराने में
भस्म कर रहे हो
उड़ा रहे हो उसे
पूर्व प्रधानमंत्रियों की चुनावी उड़ानों पर, और
सरकारों की तथाकथित उपलब्धियों के
पृष्ठांतरगामी विज्ञापनों पर।
(जिनके बल पर खरीदते हो
मेरे देश के अखबारों की आलोचनात्मक आवाज़)
लुटा रहे हो उसे
बड़े-बड़े पूंजीपतियों के कारखानों को दी गयी
सस्तीदर बिजली पर
उन्हें पांच-पांच बरस तक दी जाने वाली आयकर छूटों पर
सोचो, तुम्हीं सोचो मेरे देश कि यह कहाँ का न्याय है
और पूछो तुम्हारे नाम पर राज करने वाली

इन सरकारों से, इनके नेताओं से

कि क्या वे चाहतें है कि इस देश का आम आदमी भी

भ्रष्ट और बेईमान हो जाए उन्हीं की तरह

घपला करने लगे अपने देयों के हिसाब में

क्योंकि अगर इसी तरह बर्बाद करते रहे वे देश का पैसा

हथियारों की खरीद में, शानशौकत के प्रदर्शनों में

खाते रहे सौ प्रतिशत कमीशन

और जमा करते रहे स्विट्जरलैण्ड के बैंकों में

तो कौन ईमानदारी से देना चाहेगा अपना दाय?

क्यों हमें बेईमान बनाने पर तुले हैं वे

पूछो उनसे,

तुम्हीं पूछ सकते हो, मेरे देश !

क्योंकि तुम्हीं उनके मालिक हो।

(बेंगलूरू, अक्टूबर-2010)

शान्ति से मरूँगा मैं

शान्ति से मरूँगा मैं

बिना किसी कष्ट के

मैंने जीवन को भरपूर जिया है

भर-भर कर पिया है प्याला

और छलकाया उसे चारों ओर

संघर्ष किया है मैंने उद्ग्रीव, ऊर्ध्वबाहु

जुल्म से जबर से

यह नहीं कि सफल ही रहा हूँ सदा
उसमें हारा भी हूँ
हुआ हूँ हताश भी अनेक बार
पर ग़म नहीं पाला उस हार का
टूटा नहीं हूँ कभी।

शान्ति से मरूँगा मैं
मुझे प्यार करती है
अब तक भी मेरी प्रिया
माने देते मुझको
मेरे अपने बच्चे
मन में मेरे धधक नहीं रही है कोई
ईर्ष्या की आग
न ही धुँधवा रही है कोइ
लोभ की लकड़ी
न उसमें जाले ही बुन रही है कोई
महत्वाकांक्षा की मकड़ी
केवल एक दिया जलता है आत्म-सम्मान का
अपने मनुष्य होने के भान का।

शान्ति से मरूँगा मैं
लुका-छिपा बन्द कर
तिजोरियों में, कोठरियों में
मैंने नहीं रक्खा है जीवन का रसरंग
होली के रंगों की तरह

भर-भर कर पिचकारियों में, डोलचियों में
मारा है प्रियजनों के, परिजनों के तन-मन पर
बाल्टी की बाल्टी उड़ेला है।

शान्ति से मरूँगा मैं
स्वप्न-ध्वंस, भ्रमभंग मेरे सब हो चुके
कभी के
दंश उनके सहकर निकल आया मैं
पचास से पहले ही
अब नहीं है कोई भ्रम
टूट कर जो तोड़े मुझे।

सपना कुल संसार के
भरपेट सोने का
स्वस्थ-सुखी होने का
रक्खे है मुझको भी स्वस्थ सुखी।

शान्ति से मरूँगा मैं
नहीं हूँ ऐसे किसी जन का सहारा मैं
बेसहारा जो हो जाय
मेरे मर जाने के बाद
छोड़ जाऊँगा मैं सबके लिये कुछ न कुछ
सभी धन्यवाद देंगे
शान्ति से मरूँगा मैं।

मेरी आँखें

अँधेरे में टटोल रहे

किसी दलित, अल्पसंख्यक को

शोषित-पीड़ित स्त्री को, बच्चे को

किन्हीं भी दो दृष्टिहीन लोगों को

देंगी नवजीवन का प्रकाश-

गुर्दे भी काम आ जाएं शायद

किन्हीं जरूरतमंदों के

नष्ट नहीं करूंगा लेकिन

शेष बचे तन को भी जला कर या दफ़ना कर

पढ़ें इसे एक पाठ्यपुस्तक की तरह छात्र

चिकित्सा विज्ञान की प्रयोगशाला में

एक नया अर्थ मिले

इस निरर्थक अवशिष्ट को भी

यही सब सोचते हुए

शान्ति से मरूँगा मैं

बिना किसी कष्ट के।

(बेंगलूरू, दिसम्बर-2010)

एक दुविधाग्रस्त महिला का अन्तर्द्वन्द्व

बड़ा मुश्किल है यह तय करना
कि बम्बई जाऊँ या कलकत्ता
जब से यह सवाल मुखातिब है
परेशान हूँ सोच-सोच कर
पर कुछ समझ में ही नहीं आ रहा है
कि बम्बई जाऊँ या कलकत्ता
अगर किसी एक जगह का रिजर्वेशन
न मिल रहा होता
तो अपने आप तय हो जाता
पर मुश्किल यह है कि दोनों ही शहरों का
कन्फर्म्ड रिजर्वेशन मिल रहा है
अब तो खुद ही तय करना पड़ेगा
वैसे बुरी नहीं है बम्बई भी
पर कलकत्ते की बात ही दूसरी है
वैसे कठिनाईयां कलकत्ते की यात्रा की भी
कम नहीं है

पर वे तो कहीं की भी यात्रा में होंगी
चलो दोनों ही जगहों का रिजर्वेशन करवा लेती हूँ
तीन दिन पहले एक कैंसिल कर दूंगी
पता नहीं तब तक
परिस्थितियों का ऊँट किस करवट बैठे
हो सकता है किसी एक में
भूकम्प ही आ जाए या समुद्री तूफान
और जाना अपने आप ही रद्द हो जाए।
आप चल रहे होते
तो अपने आप ही तय हो जाता
पर आप न चल रहे हैं न मुझे बता रहे हैं
कि कहाँ जाऊँ?
आपने, ‘जहाँ चाहो चली जाओ’
की आजादी क्या दे दी
मुझे फंसा दिया
खैर, अब तो ख़ुद ही तय करना पड़ेगा
कि बम्बई जाऊँ या कलकत्ता?
यह ठीक है कि बम्बई में
शिवसेना और मनसे की गुंडागर्दी है
आप पिट सकते हैं
मुम्बई को बम्बई कहने भर से
पर कलकत्ते में कौन सुर्खाब के पर हैं
वहाँ भी तो माओवादी विस्फोट कर सकते हैं
कभी भी,
अच्छा हो कि आप ही सुझा दें कि कहाँ जाऊँ?

कम से कम बाद में यह पछतावा तो नहीं होगा
कि मैंने गलत निर्णय किया
पछतावा होगा तो यही कि
मैंने आपका सुझाव क्यों माना।
वैसे अपने अन्तर्मन से पूछूँ
तो वो तो यही कहता है कि
कौन सहेजे खाना-पानी
कौन संभाले गहना-लत्ता
भाड़ में जाये मुई मुंबई
जाय जहन्नुम में कलकत्ता।

(जुलाई-2010)

सार्थक

आज ज्यों ही मैं टहलने के क्रम में

पार्क के अपने व्यायाम स्थल पर पहुँचा
पास की ग्रेनाइट शिला पर कसरत कर रही
एक बुजुर्ग गौरांगना बुरकाधारी महिला ने
निहायत अपनेपन से भरी मुस्कान के साथ
  'नमस्ते' कहा-
नहीं जानती, नहीं पहचानती सी रूखी
बेरुख नज़रों के बदरंग बादलों के बीच
एक बिजली सी कौंध गयी-
मेरा आज का टहलना सार्थक हो गया।

(बेंगलूरू, जून-2011)

मौत

मौत ज़िन्दगी की मंजिल है
मौत से तब फिर डरना क्यों?

मौत आये तब डट कर मरना
कतरा कतरा मरना क्यों?

(5.12.2011)

सो रही है

सो रही है मेरी जान टिका कर
अपना चेहरा
मेरे कन्धे पर

उतर आया हो जैसे सब नूर

जहाँ का

किसी बन्दे पर।

(6.2.2012)

अशोक वाजपेयी की एक कविता सुनकर

कुछ लोग जो मुझसे ज्यादा सफल हुए

ज्यादा मान्य, ज्यादा प्रसिद्ध

ज्यादा ऊंचे पदों तक पहुँचे

ज्यादा सम्मानित किये गये

नजदीक पहुंचे कुछ ज्यादा बड़े लोगों के
ज्यादा बार छपे स्तरीय पत्रिकाओं में
ज्यादा भाषाओं में अनूदित किये गये
उन पर तरस आया आज पहली बार
बिचारों से कुछ ज्यादा ही कीमत
वसूल कर ली इन उपलब्धियों ने
मैं जिन्हें समझ रहा था
अपने से ज्यादा भाग्यशाली
मुझसे कम ही कर पाये अपने जीवन से प्राप्त।
नहीं तो क्यों करनी पड़ती उन्हें
अपने आखिरी दौर में यह प्रार्थना :
 'एक जीवन ऐसा भी दो प्रभु !
तन कर खड़े रह सकें जिसमें
बिना घुटने टेके।'
अफसोस भी हुआ यह सोचकर
कि इतनी सी बात के लिए बिचारों को
लेना पड़ेगा दूसरा जन्म
क्योंकि यह तो वे सहज ही कर सकते थे
इस जन्म में भी-
बस लोभ थोड़ा कम रखते
और आत्मसम्मान ज्यादा।

(जयपुर, 24.1.2012)

प्यार

प्यार
राजमलै अभयारण्य मुन्नार के
उन हल्के बैंगनी फूलों की तरह खिलता है
बारह बरस में एक बार
और तबीयत बाग़-बाग़ हो जाती है
पर उस एक बहार के बाद?
सीधी सपाट शैल-पीठिका पर
बरसों तक निचाट निष्पुष्प निर्जनता
और इन्तज़ार...बस इन्तज़ार...

यही है मेरी दुनिया में प्यार

का वास्तविक रूपाकार!

(बेंगलूरू, सितम्बर-2012)

कभी कभी

कभी कभी मैं सोचता हूँ

कि काश तुम होती किसी दूसरे की बीवी

जैसा कि हमने सोच ही लिया था एक बार

अपनी शादी से पहले

लगभग निश्चय ही कर लिया था

एक बार तो

होती किसी दूसरे की

और मिलती बड़ी मुश्किल से

कभी कभी बरसों तक तरसाने के बाद

सुख का बादल ही फट पड़ता तब तो

चाहे बहा ले जाता वह हमें

क्षत-विक्षत अंगों के साथ

किसी बरसाती नदी में।
काश तुम किसी दूसरे की बीवी होंती
तो क्या छोटी-छोटी बातों पर इस तरह
बहस करती मुझसे?
क्या तुम्हें फुरसत होती
चुराये हुए उन थोड़े से पलों में
मुझसे झगड़ने की?
क्या ऐसी फुरसत थी तुम्हें शादी से पहले?
सारी ख़ुराफ़ात की जड़ तो यह शादी ही है
जो बना देती है दोनों को
एक-दूसरे का एकाधिकारी पहरेदार
टेढ़ी कर देती है एक की भृकुटियाँ
दूसरे को किसी से मुस्कुरा कर बतियाते देख कर भी।
काश तुम होती सिर्फ़ मेरी प्रेयसी
जैसी थीं बरसों पहले
ठीक है, न होती यह जमी हुई गिरस्ती
यह फ्लैट, यह कार
ये अपने कामों में डूबे हुए बच्चे
काश तुम होतीं किसी दूसरे ...
या न होतीं किसी की भी
रहतीं अपने घर में अकेली
पहले की तरह
शायद कभी-कभार ही आता मैं तुम्हारे पास
और खिलातीं तुम मुझे बादाम का हलवा
जो अब भी खिला तो देती हो कभी कभी

पर तभी जब आने वाला होता है
कोई विशिष्ट मेहमान
या कभी अपने बच्चों या उनके बच्चों की
होती है बरसगांठ।
काश...

चूमा कर

चूमा कर चुमवाया कर
इसमें न सकुचाया कर।
दिन में अगर नहीं है फुर्सत
सांझ पड़े आ जाया कर।
अजनबियत की धूप है तीखी
मुझ पर प्यार का साया कर।
प्यार का सौदा सच्चा सौदा
जम कर प्यार कमाया कर।
सांसों का सिलसिला ज़िन्दगी
सांस से सांस मिलाया कर।
प्यार यहाँ इकलौता अमृत
पीकर, मुझे पिलाया कर।
प्यार से अपने प्राण धन्य कर
और सफल यह काया कर।

(अक्टूबर-2012)

हो सारा संसार बराबर

आर बराबर, पार बराबर
हो सारा संसार बराबर।
मालिक और मजूर बराबर
बाम्हन और चमार बराबर।
एक-एक को दस दस बंगले
यह अन्याय अपार बराबर।
रोटी, कपड़ा, घर, इलाज पर
सबका हो अधिकार बराबर।
पांच उंगलियां नहीं एक सी
बात तुम्हारी यार, बराबर।
दुगुनी नहीं पर कोई किसी से
यह अन्तर स्वीकार बराबर।
लाख करोड़ गुना अन्तर यह
जुर्म, जबर, अतिचार बराबर।
धन, धरती, पानी बँट जाये
यंत्र, तंत्र, औजार बराबर।
उत्पादन के हर साधन पर
श्रमकर का अधिकार बराबर।
कुदरत बराबरी की हामी
उसका है व्यवहार बराबर।
हर प्रजाति के भीतर देखो
रूप रंग आकार बराबर।

फूल-फूल तितली-तितली में
सम्मिति का विस्तार बराबर।
कुछ लोगों के छल-बल का फल
विषम विकल संसार सरासर।
इसे बनाना ही होगा अब
इक वैश्विक परिवार बराबर।
जरा रोग पीड़ित अशक्त जन
मिले सभी को प्यार बराबर।
काफ़िर-मोमिन, आस्तिक-नास्तिक
सबके हों अधिकार बराबर।
सबके लिये बने यह पृथ्वी
सुख-सुविधा आगार बराबर।

अगर आपको

अगर आपको
इफरात में आये हुए फलों के
सड़ने की चिन्ता है
अगर आपको बुरा लगता है
मॉल से बिना भाव जांचे बेजरूरी चीज़ें

थोक में खरीदा जाना

समझ लीजिए कि आप बूढ़े हो गये हैं

अगर आपको

परेशान करती है

बेटी-दामाद की थाली में

बढ़ती हुई और कूड़े में फेेंकी जा रही जूठन

अगर आपको उनकी शोबाजी और अपव्यय

अखरता है

तो समझ लीजिए कि आप बूढ़े हो गये हैं

और कॉरपोरेट जगत के

युवाओं को समझने में असमर्थ हैं।

संसद में कैसे घुस आये

निपट गये सब काम साथियों

अब कर लो आराम साथियों।

खटते खटते दिन भर बीता

सुबह से हो गयी शाम साथियों।

जीते को यह पूरी दुनिया

हारे को हरिनाम साथियों।

ऐसे काम करो तुम, जिनका

अच्छा हो परिणाम साथियों।

संसद में कैसे घुस आये

इतने नमक हराम साथियों।
प्रश्न पूछने के भी लेते
जो लोगों से दाम, साथियों।

(28.2.2012)

लेट जा, भई लेट जा

खाना खा और लेट जा।
पानी पी और लेट जा।
कसरत कर और लेट जा।
नाश्ता कर और लेट जा।
सब्जी काट के लेट जा।
कविता छांट के लेट जा।
दवा खा और लेट जा।
हवा खा और लेट जा।
पेपर पढ़ कर लेट जा।
ख़बरें सुनकर लेट जा।
थक जाये तो लेट जा।
छक जाये तो लेट जा।

पड़ी खाट है लेट जा।

बड़ा ठाठ है, लेट जा।

कुछ ना सूझे, लेट जा।

कोई न पूछे लेट जा।

जब जी चाहे लेट जा।

गाहे-बगाहे लेट जा।

थोड़ा पढ़ और लेट जा।

थोड़ा लिख और लेट जा।

अपना घर है, लेट जा।

थकी उमर है लेट जा।

चिन्ता मत कर, लेट जा।

वक्त से मत डर, लेट जा।

धोखा खाकर, लेट जा।

मौका पा कर, लेट जा।

कोई बुलाए, लेट जा।

परवा मत कर, लेट जा।

लेट जा भई लेट जा।

सबसे अच्छा लेट जा।

चार्वाक का यही है कहना

जब तक जीओ, सुख से जी लो
ॠण लेकर मीठा रस पी लो।
स्वस्थ रहो, नीरोग रहो
करते सारे भोग रहो।
मरने तक ही यह जीवन है
पुनर्जन्म तो निरा वहम है।
इसे अर्थ दो, मूल्य मान दो
स्वर्ग-नरक हैं यहीं जान लो।
औरों को भी सुविधा-सुख दो
तुक-विहीन जीवन को तुक दो।
सबको अपने जैसा जानो
पृथ्वी पर सबका हक़ मानो।
चार्वाक का यही है कहना
जब तक रहना खुश-खुश रहना।

हिन्दी समय सागर में

कितना अच्छा लगता है जब
हिन्दी समय सागर में
लगातार प्रवहमान
'र'   की फेरी में आमोद यात्रा करते हुए
पाता हूँ खुद को।
वाह ! कितना भाग्यशाली हूँ
कि उसी फेरी में बैठा हूँ
जिसमें बैठे हैं, थोड़ी ही दूर पर
मेरे प्यारे पुरखे रहीम और रसखान भी
और कुर्सियों की दो पाँतें छोड़कर
तीसरी में ही विराजमान हैं
रवीन्द्रनाथ ठाकुर भी
और सब लिए हैं अपने साथ
अपनी-अपनी किताबें भी।
वाह ! मज़ा आ गया गया
ले सकता हूँ किसी के भी हाथ से
उसकी कोई किताब
और पढ़ सकता हूँ उसे
जब चाहूँ। देखो तो
राजिन्दरसिंह बेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी
और राही मासूम रज़ा भी बैठे हैं पास ही की पंक्ति में।
अरे, मैंने तो ध्यान ही नहीं दिया
मेरी अपनी पंक्ति में
मेरे पुराने दोस्त रमेश बक्षी और रमेश उपाध्याय के बाद
कुछ सीटें छोड़कर आसीन है रांगेय राघव

रामदरश मिश्र, डॉ. लोहिया और राहुल जी भी
लहरों के झपाटे ज़रा कम हों
तो अपनी कुर्सी से उठूँ
और उन्हें प्रणाम कर के आऊँ
और माँग लाऊँ उनसे
उनकी कोई नहीं पढ़ी हुई किताब।
खुशकिस्मत हूँ कि हूँ उनका सहयात्री।
कितना सुखद है कि मैं जब चाहूँ
बात कर सकता हूँ पास में खड़े होकर
रसीदजहां आपा से
रामचन्द्र शुक्ल जी से
और उनके पास बैठे दिनकर जी से भी
शुक्रगुज़ार हूँ तुम्हारा
महात्मा गाँधी हिन्दी विश्वविद्यालय
और दोस्त राजकिशोर
कि तुमने इतने बड़े-बड़े लोगों के साथ
सफ़र करने का मौका दिया मुझे
हिन्दी समय सागर के
एक ही जहाज में।

बयान

यह कौन सी बला लग गयी है
मेरे देश के पीछे
गरीबी और भुखमरी तो पहले से ही थीं
अब तक भी हो ही रहा था
दलितों-आदिवासियों-अल्पसंख्यकों पर अत्याचार
बस कमी थी तो इस नये डेंगू की
जिसने पिछले सोलह महीनों में
इतनी बढ़ा ली है अपनी नस्ल
कि चारों तरफ सुनायी पड़ रही है
इसी की भूँ-भूँ।

वाह रे इन्सान !
तुम जानवरों तक को देखने लगे हो
अपनी रंगभेदी नज़र से
भैंसों के मांस का वैश्विक व्यापार तुम्हारा

फूल फल रहा है बेरोकटोक
पर पूरे देश में तुम वर्जित कर देना चाहते हो
गाय का मांस।
गोरी चमड़ी की गुलामी
तुम्हें यहाँ तक खींच लायी।
जिसे युगों तक खाते रहे तुम्हारे पुरखे
उस पर अखिल भारतीय प्रतिबंध लगाना चाहते हो तुम
क्या सिर्फ इसलिए कि उसे पसन्द करते हैं वे लोग
जिन्हें तुम मलेच्छ मानते हो
और सिर्फ दूसरी श्रेणी का नागरिक
बना कर रखना चाहते हो, अपने देश में।
और जिसका मुर्दा मांस खाने के लिए
मजबूर हैं युगों से, सस्ते प्रोटीन के कारण
वे लोग
जिन्हें भंगी-चमार बना कर रक्खा है तुमने
अपनी कॉलोनियों से बाहर की गंदी बस्तियों में।

जो अपने फ्रिज में रक्खे गाय का मांस
सरेआम पीट पीट कर उधेड़ लो
उस इन्सान का मांस।
मारो उसे
जो भी तुम्हारी धार्मिक भावनाओं को आहत करे
चाहे वह दाभोलकर हो या कलबुर्गी
सुकरात, मंसूर या चार्वाक
ब्रूनो या गेलोलियो

अब तो तुम्हारे ही सैंया हैं कोतवाल।

लड़ो, लड़ते रहो मेरे देश के
कुछ-कुछ भले/ कुछ-कुछ अच्छे लोगों।
लड़ो एक-दूसरे के खिलाफ़ चुनाव
काटते रहो एक-दूसरे के वोट
और देखते रहो
देश को जहन्नुम में जाते हुए
कभी मत लड़ो चुनाव की इस प्रणाली के खिलाफ़
विजयी घोषित कर दिया जाता है जिसमें
कुल के दस फीसदी वोट पाने वाला भी।

आशा की किरन दिखाई दी थी एक
अरविन्द केजरीवाल
पर उस 'छोटे आदमी' ने एकछत्र बनने के चक्कर में
कितनी जल्दी दिखा दिया
अपना टुच्चा प्रॅक्टिकल व्यक्तित्व
अपने सबसे सिद्धान्तनिष्ठ साथियों को
बाहर का रास्ता दिखा कर।

कैसी विडम्बनापूर्ण स्थिति है कि
सबसे बुरे लोग सबसे ज्यादा संगठित हैं
कम बुरे कम संगठित
और अच्छे लोग सबसे कम संगठित।

(अगस्त-2016)

लगता है

लगता है नाकाम रहे हम
लड़ लड़ कर बस हार गये हम
सोचा था दुनिया बदलेगी
बहुजन की किस्मत चमकेगी
पर यह टस से मस न हुई
थोड़ी भी समरस न हुई।
मन करता देने को गाली
ज़रा न बदली दुनिया साली।
ट्रम्प-पुतिन का तारा चमका
और बढ़ा अंधियारा ग़म का।
देश का हाल तो और बुरा है
चाकू था, जो हुआ छुरा है।
धनपतियों की गिनती बढ़ गयी
विष की बेल वृक्ष पर चढ़ गयी
आम आदमी परेशान है
मंहगाई से हलाकान है
कर्ज़ में गर्क अन्न-फल-दाता
फांसी पर खुद लटका जाता।
तवारीख में नाम, लिखाने
कालेधन को श्वेत बनाने

चलता चाल तुगलकी नेता
वादे करता, कुछ नहीं देता।
भारत माता हुई पुरानी
गौमाता ही अब महारानी
हिन्दू हित की बात नई है
गौरक्षा की घात नयी है
भीड़ की हिंसा नयी आ गयी
जन-मन में वह जगह पा गयी।
क्या होगा इस देश का हाल?
गर फिर जीते नटवर लाल।

काफ़ी है

काफ़ी है धन-धान्य अर
ठीक-ठाक सम्मान।
मुझको कुछ भी न चाहिए
मन अब शाह जहान ।

(22.11.2016)

सुन्दरता

सुन्दरता भी प्रकृति का कितना बड़ा वरदान है
इसके आगे कितनी फीकी नर की झूठी शान है
राह के चारों तरफ खुशियाँ लुटाती यह चले
मोती लुटाता मानसर का हंस ही उपमान है।

(5.5.2018)

अच्छी लगती है

लाल शर्ट पर झक सफेद सलवार तुम्हारी

अच्छी लगती है

पास से आती भीनी मस्त बयार तुम्हारी

अच्छी लगती है

मेरी टहल को स्वास्थ्य से बढ़कर

एक अर्थ मिल जाता है

मुझसे थोड़ी और तेज़ रफ़्तार तुम्हारी

अच्छी लगती है।

(9.5.2018)

लष्टम पष्टम

सब कुछ लष्टम पष्टम है

बिगड़ा पूरा सिस्टम है।

कमज़ोरों को गोली मारो

यही यहाँ का कस्टम है।

सत्य, न्याय ईमान अहिंसा

मूल्य-मान सब नष्टम है।

जनसेवा व्यवसाय सियासत

मुज़रिम सबमें रुस्तम है।

चोर लुटेरे प्रथम पंक्ति में
भले आदमी अष्टम हैं।

चिन्ता मत कर

चिन्ता मत कर, चिन्तन कर
आफ़त की आशंका से मत घबरा
आफ़त जब सचमुच आ जाये
तब तू उठकर सामने आ
मन की शान्ति बनाये रख
स्थिर कर अपनी बुद्धि, न डर
चिन्ता मत कर, चिन्तन कर।

(दिसम्बर-2018)